हास्य व्यंग्य कविताओं के सामाजिक सरोकार

डॉ0 अनिल शर्मा
रूड़की

काव्यशास्त्रीय दृष्टि से हास स्थायी भाव है। इसका उद्‌भव साहित्य–रचना से पूर्व सृष्टि के साथ ही हो गया होगा। प्राचीन साहित्य से लेकर अब तक पूरे भारतीय साहित्य में हास्य के दर्शन होते हैं। हास्य एक स्वाभाविक क्रिया है। यह शुद्ध और निर्मल हृदय का उद्‌गार है। जहाँ समाज होगा, वहाँ निश्चित रूप से हास्य उपस्थित रहेगा। संस्कृत साहित्य से लेकर अब तक के रचे गये पूरे भारतीय साहित्य में हास्य के दर्शन होते हैं। शुद्ध हास्य लिखना बहुत कठिन माना जाता है, क्योंकि हँसाना भी कोई हँसी खेल नहीं है।

हास्य और व्यंग्य के बीच एक लंबा फासला है। 'व्यंग्य' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग कब और किस संदर्भ में हुआ, यह तो नहीं कहा जा सकता लेकिन तुलसीदास की एक चौपाई **'मन ही मन महेश मुसुकाहीं, हरि के बिंग्य बचन नहिं जाहीं'** में प्रयुक्त शब्द 'बिंग्य' को व्यंग्य माना गया है। वास्तव में व्यंग्य आधुनिक काल की उपज ही माना गया है। पद्य की अपेक्षा गद्य में इसका अधिक प्रयोग हो रहा है। हास्य केवल हास्य होता है और व्यंग्य केवल व्यंग्य। लेकिन आजकल शब्दों का एक साथ हास्य–व्यंग्य प्रयोग देखकर ऐसा लगता है मानो ये जुड़वॉ भाई हों जबकि इनकी मूल रचना और उद्‌देश्य में भी फर्क है। व्यंग्य प्रारंभिक दौर में हास्य का उपजीवी रहा है। हास्य का लक्ष्य मनोरंजन है, व्यंग्य का विसंगतियों का उद्‌घाटन। हास्य तात्कालिक होता है, व्यंग्य वैचारिक। हास्य गुदगुदाता है, व्यंग्य तिलमिलाता है। हास्य मनोरंजनवादी है, व्यंग्य यथार्थवादी। फिल्म के कामेडियन और हीरो में जो अंतर है वही हास्य और व्यंग्य में। कामेडियन दर्शकों को गुदगुदाता है। वहीं दूसरी ओर हीरो विसंगतियों से लड़ता है।

हास्य, व्यंग्य के लिए साधक हो सकता है, बशर्ते उसका अनुपात दाल में नमक के बराबर हो। मात्रा में अल्प होते हुए नमक दाल को स्वादिष्ट बनाता है वैसे ही अल्पता के बावजूद हास्य व्यंग्य को ज्यादा पठनीय बना देता है। दरअसल, खालिस व्यंग्य तीखी मिर्च की तरह होता है। सामान्य पाठक पर वह भारी पड़ सकता है। हास्य व्यंग्य की एकरसता को तोड़ता है और उसके तीखेपन को सुपाच्य बनाता है।

हास्य–कविताओं की एक लंबी परंपरा रही है। मौलिक हास्य कविताओं के साथ पैरोडियों का भी खूब प्रकाशन हुआ है जैसे निराला की **'अबे सुन बे गुलाब'**, भवानी प्रसाद मिश्र की **'जी हाँ, हजूर, मैं गीत बेचता हूँ।** अज्ञेय की साँप कविताएं व्यंग्य कविताओं के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। मैथिलीशरण गुप्त की रचना **'सखि वे मुझसे कहकर जाते'** की बरसाने लाल चतुर्वेदी ने बहुत अच्छी पैरोडी बनाई है।

लखन सिनेमा पति गए, नहिं अचरज की बात,
पर चोरी चोरी गए, यही बड़ा आघात,
सखि। वे मुझसे कहकर जाते।

अज्ञेय की व्यंग्य कविता 'साँप' की पैरौडी भी देखिये कितनी सुन्दर बन पड़ी है ।

बंधु तुम स्कालर तो हुए नहीं
लिखना भी तुमें नहीं आया
पर

एक बात पूछूँ। उत्तर दोगे?
पुस्तक कहाँ छपाई?
पुरस्कार कैसे पाया?

हिन्दी व्यंग्य–कविता में कबीर, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन आदि का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है। धार्मिक पाखण्ड पर अपना व्यंग्य बाण चलाते हुए कबीर कहते हैं।

माला फेरत युग भया, फिरा न मन का फेर।
कर का मन का डारि दे, मन का मनका फेर।।

मूर्ति पूजा पर व्यंग्य की छटा देखिए –

पाहन पूजे हरि मिले तो मैं पूजुँ पहार।

अपने ज्ञान पर घमंड करने वाले और पाण्डित्य का झूठा प्रदर्शन करने वाले तथाकथित विद्वानों को कबीर कहते हैं।

पोथी पढ़–पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।

वर्तमान में भौतिकवाद और बाजारवाद ने जो सबसे बड़ा नुकसान किया है, वह है बौद्धिकता और सृजनशीलता का अवमूल्यन। बाजारवादी मूल्य समाज को मुर्दो का टीला बनाने पर तूले हैं। सामाजिक पतन की गति इतनी तेज है कि अपराधी ऊंचे–ऊंचे पदों पर बने बैठे हैं। धर्मगुरुओं को हत्या और बलात्कार में संलग्न देखा जा रहा है। विश्वविद्यालयों में हिंसा नंगी नाच रही है। चिकित्सालय मानव अंगों की तस्करी के केन्द्र बन गए हैं। भ्रष्टाचार के सामने भगवान शंकर का तांडव भी फीका है। इस विस्फोटक सामाजिक स्थिति में व्यंग्य रचनायें इन्हीं परिस्थितियों के विरुद्ध प्रतिरोध का स्वर है। सत्ता के ठेकेदार हो या चिकित्सक सभी क्षेत्रों की पतनशीलता से पाठकों के साक्षात्कार का प्रयास व्यंग्य कविताओं में हुआ है।

व्यंग्य लेखन की विशेषता तो उसकी विविधता में है। सबसे ज्यादा पाखंड हमारी राजनीति और धर्म में है। व्यंग्य–रचनाकारों ने राजनीति के पाखण्ड को पिछले पचास वर्षो में पूरी तरह निचोड़ लिया है। कविता में सूरदास ने जैसे वात्सल्य का कोना–कोना छान मारा वैसे ही हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, काका हाथरसी, आशोक चक्रधर आदि व्यंग्य रचनाकारों ने राजनीति का धार्मिक पाखंडों के अनेक पक्षों के उद्घाटन की गुंजाइश अभी भी बाकी है। कोई भी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक क्षेत्र पाखंडवाद से अछूता नहीं है ।

सामयिक घटनाएँ व्यंग्य रचनाकारों को ज्यादा प्रेरित करती हैं। महँगाई, बेरोजगारी, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, राजनीतिज्ञों का असंसदीय आचरण, महिलाओं का शोषण, शिक्षा का असभ्य चरित्र आदि व्यंग्य लेखन के स्थाई विषय हैं। टी0 वी0 की स्वच्छंद लीलाएँ पत्रकारिता का बाजारीकरण, फिल्मों में सेक्स की बीमारी और तरह–तरह के अपराध उद्योग व्यंग्य लेखकों को भरपूर सामग्री प्रदान करते हैं। हमारे लोकतंत्र में **'जित देखो तित व्यंग्य'** विराजमान है। विसंगतियों का इतना विशाल क्षितिज अन्य किसी देश के पास नहीं है।

हास्य–व्यंग्य में सामाजिक सरोकारों से हमारा अभिप्राय उन सभी संदर्भों से है, जो समाज से जुड़े होते हैं। आज हास्य व्यंग्य रचनाओं में समाज से जुड़े हुए हर उस अच्छे बुरे पहलू को अभिव्यक्ति मिल रही है। जो व्यक्ति के जीवन पर सकारात्मक या नकारात्मक किसी भी रुप में,

गहरा प्रभाव डालते हैं या डाल सकने में समर्थ हैं। कवि के निजी अनुभवों के प्रकटीकरण और सरलीकरण का मूल उद्देश्य यही होता है कि पाठक एवं श्रोता उससे लाभान्वित हों और अपने जीवन के लिए कोई शिक्षा या प्रेरणा ग्रहण कर सके। वस्तुतः कविता का यही सामाजिक सारोकार है।

हास्य–व्यंग्य कविताओं में सामाजिक सरोकार की विस्तृत जानकारी के लिए यहाँ निम्नलिखित प्रमुख शीर्षकों के अन्तर्गत चर्चा करना समीचीन रहेगा।

1. मानवीय मूल्यों का विघटन :

आज समाज में इंसानियत नाम की कहीं कोई वस्तु नहीं रह गई है। इस स्थिति पर कवि बालस्वरुप राही का व्यंग्य देखिए–

हथकड़ी लेकर किसे ढूँढ रहे हैं सब लोग,
क्या शहर में कोई इंसान बाकी है।

संकीर्ण सोच और स्वार्थ की भावना के कारण आदमी जानवर से भी बदतर हो गया है। उसकी पशु प्रवृति पर व्यंग्य करते हुए डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल कहते हैं।

क्यों न उतरा आदमी के वेश में,
भेड़िया सोचेगा औ' पछताएगा।

दूसरों को रौंदकर आगे निकल,
वरना तू भी नासमझ कहलाएगा।।

मानवीय संवेदनहीनता पर करारा व्यंग्य करते हुए प्रख्यात हास्य कवि काका हाथरसी की यें पंक्तिया देखिए–

पिल्ला बैठा कार में, मानुष ढोवे बोझ
भेद न इसका मिल सका बहुत लगाई खोज
बहुत लगाई खोज, रोज साबुन से न्हाता
देवीजी के हाथ, दूध से रोटी खाता
कह काका कवि मॉगता हूँ वर चिल्ला चिल्ला
पुनर्जन्म में प्रभो बनाना हमको पिल्ला

चक्रधर शुक्ल की यें पंक्तियॉ देखिए–

संवेदनाएँ
जबसे मरने लगी हैं।
सूर्पणखाएँ राम–लक्ष्मण से नहीं
रावणों से डरने लगी हैं।

मूल्यावनति का संकेत देने वाली अशोक चक्रधर की कविता **'राशनवाला उवाच'** में सामाजिक मूल्य–ह्रास की व्यंग्य प्रस्तुति निम्न पंक्तियों में हुई है–

पत्नी को मरे
पूरे दस साल हो गए
राशन अभी तक ले रहे हो?

सरकार को चूना दे रहे हो!
सरकार!
वैसे तो ये बंदा शर्मिन्दा है,
पर मेरी बीवी मरी कहाँ है
दिल में तो
अभी तक ज़िन्दा है।

2. समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार :

आज सब जगह रिश्वत का बोलबाला है। हर काम रिश्वत की सहायता से संपन्न हो सकता है। कभी रिश्वत लेने वाला पकड़ा भी जाए तो भी उसका बाल बॉका नहीं हो सकता। काका हाथरसी ने इस स्थिति पर करारा व्यंग्य किया है–

कूटनीति मंथन करी, प्राप्त हुआ यह ज्ञान,
लोहे से लोहा कटे, यह सिद्धांत प्रमान।
यह सिद्धांत प्रमान, जहर से जहर मारिए,
चुभ जाए काँटा, काँटे से ही निकालिए।
कह काका कवि, काँप रहा क्यों रिश्वत लेकर,
रिश्वत पकड़ी जाय, छूट जा रिश्वत देकर।

भ्रष्टाचार की मार से न्यायालय भी नहीं बच पाये हैं। काका हाथरसी का एक और सुन्दर छक्का देखिए–

न्याय प्राप्त करने गए, न्यायालय के द्वार,
इसी जगह सबसे अधिक पाया भ्रष्टाचार।
पाया भ्रष्टाचार, मिसल को मसल रहे हैं।
ईंट–ईंट से रिश्वत के स्वर निकल रहे हैं।
कहँ काका, जब पेशकार जी घर को आए,
तनुखा से भी तिगुने नोट दबाकर लाए।

माताप्रसाद शुक्ल का एक सुन्दर व्यंग्य जैसे सब कुछ बयां कर रहा है।

आज सारा देश
भ्रष्टाचार की चपेट में है
अधिकांश
नेताओं के पेट में है।

चक्रधर शुक्ल ने अपनी व्यंग्यिकाओं के माध्यम से भ्रष्टाचार पर गहरा तंज कसा है–

ग्राम प्रधान ने
गाँव का भट्ठा बैठाया
अपने नाम से भट्ठा लगवाया।

मिड डे मील से
ग्राम प्रधानों की
ऐसी हुई कमाई

खूब खिचड़ी पकाई
मिल–बाँट के खाई।

प्रसिद्ध हिन्दी ग़ज़लकार दुष्यंत कुमार ने अपने इस शेर के माध्यम से भ्रष्टाचार पर तीखा प्रहार किया है–

यहाँ तक आते–आते सूख जाती हैं कई नदियाँ,
मुझे मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।

अतः यह कहा जा सकता है कि रचनाकारों ने समाज में चारों ओर व्याप्त भ्रष्टाचार पर अपनी व्यंग्य–कविताओं के माध्यम से सधी हुई प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

3. महानगरीय जीवन की विद्रूपताएँ:

यंत्रवत् व्यस्त नगरीय जीवन के प्रभाव के कारण मानव–हृदय की कोमल अनुभूतियाँ निरन्तर अस्तित्वहीन एवं क्षीण होती जा रही हैं। प्रसिद्ध ग़ज़लकार ज़हीर कुरैशी ने शहरी सभ्यता पर व्यंग्य करते हुए कहा है–

रिश्तों के आईने जहाँ टूटे हैं बार–बार,
उन स्वार्थों की बेरहम चट्टान है शहर।

जिसमें कभी भी प्यार की खुशबू नहीं मिली,
इक वेश्या के अधरों की मुस्कान है शहर।

जीता है जिसमें आदमी मुर्दों की जिंदगी,
कुछ लाख ज़िंदा लाशों का शमशान है शहर।

आज की महानगरीय सभ्यता में आदमी का अस्तित्व कितना बौना हो गया है। डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने इसे बहुत सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है–

अब मेरे अस्तित्व को ललकारती हैं चिमनियाँ,
मेरे बदले मेरा साया रह गया चारों तरफ।

4. राजनीतिक विद्रूपताएँ:

आज की राजनीति में मानवीय एवं नैतिक मूल्यों का भारी अवमूल्यन हुआ है। राजनीति तो अब जैसे अनीति का पर्याय ही हो गई है। सत्तालोलुप नेता येन–केन–प्रकारेण केवल सत्ता पर अपना अधिकार जमाना चाहते हैं। नेताओं की वादे करने और भूल जाने की प्रवृत्ति तथा अति महत्त्वाकांक्षा के प्रति आगाह करते हुए डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल कहते हैं–

न हो जिनमें वफा, उनसे वफ़ा अच्छी नहीं होती,
समझ लेना कि बेमौसम घटा अच्छी नहीं होती।

संसद में निरर्थक बहस और राजनीतिक भ्रष्टाचार के संबंध में ही महान ग़ज़लकार दुष्यंतकुमार की अभिव्यक्ति देखिए–

इस सड़क पर इस क़दर कीचड़ बिछी है,
हर किसी का पाँव घुटनों तक सना है।

पक्ष औ' प्रतिपक्ष संसद में मुखर है,
बात इतनी है कि कोई पुल बना है।

तथाकथित समाजसेवी राजनीतिज्ञों पर माताप्रसाद शुक्ल का व्यंग्य देखिए–

वे फेंकते हैं
जनता पर मायाजाल
जनता जाल में फँस जाती है
माया उनके यहाँ
चली आती है।

श्री शुक्ल की ही एक और क्षणिका प्रस्तुत है–

वे भारतीय संस्कृति के
पुजारी हैं
इसलिए प्रणाम करते हैं
हाथ गंदे न हो जाएँ
इसलिए गरीबों से
हाथ नहीं मिलाते हैं।

चुनावी राजनीति के खेल पर करारा व्यंग्य करते हुए रामयतन यादव की पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

वे हर पाँच साल के बाद
अपनी लोकप्रियता को
कुछ इस तरह
भुनाते हैं
चुनाव में खड़े होने के बाद
कुछ लेकर
किसी के पक्ष में बैठे जाते हैं।

प्रसिद्ध व्यंग्यकार अशोक चक्रधर के निम्न दोहों में राजनीति पर कटाक्ष की छटा देखिए–

राज नीति से दूर है, नीति राज से दूर ।
राजनीति में बढ़ गई, अब दूरी भरपूर।।

गिरगिट रोया रात भर, क्या है मेरा दोष ।
नेता से तुलना करी, नेता सब मदहोश।।

सबका अपना कर्म है, सबका अपना भाग।
उँगली पर तो लग चुका, लोकतन्त्र का दाग।।

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि व्यंग्य रचनाकारों का राजनीतिक बोध उनकी व्यंग्य रचनाओं में अत्यन्त मुखर है और राजनीतिक विद्रूपताओं पर उन्होंने करारी चोट की है।

5. पारिवारिक संबंधों की प्रस्तुतिः

'परिवार' समाज का ही एक घटक है। परिवार की परिधि के अन्तर्गत परिवेश में प्रकट होने वाले प्रसंगों को हास्य–व्यंग्य रचनाओं ने सफलता के साथ प्रस्तुत किया है। इसी परिप्रेक्ष्य में अशोक चक्रधर की एक कविता है 'ओजोन लेयर'। इस कविता में पति–पत्नी के बीच का तनाव प्रस्तुत हुआ है। यह कविता यथार्थ के दर्शन कराती है–

पति–पत्नी में बिल्कुल नहीं बनती है,
बिना बात ठनती है।
खिड़की से निकलती हैं
आरोपों की बदबूदार हवाएँ,
नन्हें पौधों जैसे बच्चे
खाद–पानी का इंतज़ाम
किससे करवाएँ

चक्रधर जी ने इस व्यंग्य के माध्यम से संदेश दिया है कि पारिवारिक झगड़े बच्चों के हित में नहीं है क्योंकि ये बच्चों के भविष्य और उन्नति में बाधा उत्पन्न करेंगे।

व्यक्ति के विवाह से पहले और विवाह के बाद की स्थिति को सुन्दर हास्य रचना के माध्यम से काका हाथरसी कितना अच्छा समझाते हैं–

भोलू तेली गाँव में करे तेल की सेल,
गली–गली फेरी करे, 'तेल लेउ जी तेल'।
तेल लेउ जी तेल, कड़कड़ी ऐसी बोली,
विजुरी तड़के अथवा छूट रही हों गोली।
कहँ काका कवि, कछु दिन तक सन्नाटौ छायौ,
एक वर्ष तक तेली नहीं गाँव में आयौ।

मिल्यौ अचानक एक दिन, मरियल वाकी चाल,
काया ढीली पिलपिली, पिचके दोऊ गाल।
पिचके दोऊ गाल, गैल में धक्का खावै,
'तेल लेउ जी तेल', बकरिया सौ मिमियावै।
हमने पूछी – 'यह का हाल है गयौ तेरौ?'
तेली बोल्यौ – 'काका ब्याह है गयौ मेरौ।'

पति–पत्नी की नोक–झोंक का एक सुन्दर दृश्य हास्य कवि अशोक शर्मा की निम्न पंक्तियों में देखिए–

परेशान पति ने पत्नी से कहा–
एक मैं हूँ, जो तुम्हें निभा रहा हूँ
लेकिन अब,
पानी सर से ऊपर जा चुका है
इसलिए आत्महत्या करने जा रहा हूँ।

पत्नी बोली–
ठीक है,
लेकिन हमेशा की तरह
आज मत भूल जाना,
और लौटते समय
दो किलो आटा जरूर लेते आना।

आजकल की पढ़ी–लिखी गृहणी का हाल काका हाथरसी के इस छक्के में देखिए–

आधुनिका पत्नी मिली, पति के पड़ी नकेल,
वाक्शास्त्र में पास थी, पाकशास्त्र में फेल।
पाकशास्त्र में फेल, रसोई कर दी चालू,
स्वेटर बुनने लगी, जल गए सारे आलू।
पुस्तक खोली, पति से बोली, जल्दी जाओ,
जले आलुओं के ऊपर 'बरनोल' लगाओ।

हास्य–व्यंग्य रचनाओं ने पारिवारिक संबंधों के विभिन्न आयामों को अपनी रचनाओं में प्रतिबिंबित किया है। इनमें पति–पत्नी का निश्छल हास्य भी है और व्यंग्य की सीख भी।

6. बेईमानी, झूठ, फरेबः

दिखावा करना, धोखा देना, झूठ बोलना और बेईमानी जैसे जिंदगी के अंदाज हो गए हैं। आज दुःख में लोग दिलासा देते तो हैं, परन्तु झूठा; मिलने पर हँसेंगे, लेकिन झूठी हँसी। ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति के मन में एक बार को यह विचार अवश्य आता है कि उसे भी दिखावा करना सीख लेना चाहिए। डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल के निम्न शेर इस संबंध में बिल्कुल यथार्थ स्थिति का वर्णन करते हैं–

जिंदा रहने के लिए चेहरे बदलना सीख लूँ,
यानि, धोखा सीख लूँ, मैं भी दिखावा सीख लूँ।

दर्द में हमदर्दियाँ, चाहत, हँसी, आँसू : कला,
क्यों न तुमसे जिंदा रहने का सलीका सीख लूँ।।

बेईमानी का लबादा ओढ़े आदमी के लिए छल, कपट और झूठ ही 'ईमान' हो गए हैं–

सत्य को ईमान को पूछेगा कौन,
हम जो हैं, शैतान को पूछेगा कौन।

उमाशंकर मनमौजी की इस क्षणिका में 'बेईमानी में ईमानदारी' का कमाल देखिए–

वे ईमानदारी की श्रेणी में आते हैं,
जब भी करते हैं बेईमानी
सबका अपना हिस्सा
ईमानदारी से दे जाते हैं।

आदमी के बनावटीपन, दिखाने, बेईमानी, झूठ और धोखे जैसी समाज की कड़वी सच्चाइयों को माताप्रसाद शुक्ल ने अपनी क्षणिकाओं में बहुत सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है–

उनका ही हो रहा है भला
जो दूसरों को
बेवकूफ़ बनाने की
जानते हैं कला।

उनके पास
शब्द–जाल है
माल ही माल है

आज के युग में
वही है नर
जिसके पास है
जुगाड़ का हुनर।

7. आतंकवाद और अलगाववादः

आज लगभग पूरा विश्व किसी–न–किसी प्रकार आतंकवाद की चपेट में है। मज़हबी उन्माद या धन के लालच के चक्कर में आतंकवादी लाखों मासूम लोगों को मौत के घाट उतार चुके हैं। आतंकवादी कोई आसमान से टपका हुआ अनोखा जानवर नहीं है, बल्कि हम सबके बीच का एक ऐसा आदमी है, जिसने अपनी आदमीयता को लालच में त्याग दिया है। आदमी के खून का प्यासा बने आदमी की स्थिति डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल के निम्न शेर में देखिए–

बहुत मर गए हैं छतें उड़ गई,
कोई हादिसा फिर अचानक हुआ।

ग़जब यह है खुद मैं ही अपने खिलाफ,
कई साजिशों में सहायक हुआ।

साम्प्रदायिकता से उत्पन्न होने वाले तनावपूर्ण दृश्यों को व्यंग्यकार अशोक चक्रधर ने अपनी कविताओं में दर्शाया है। वह लोगों की संकीर्ण मानसिकता पर प्रहार करते हैं। कविता की इन पंक्तियों द्वारा व्यंग्यानुभूति महसूस की जा सकती है–

चिड़िया बैठी गुरुद्वारे पर
गिरजा, मंदिर, मस्जिद पर
लेकिन क्यों जमकर बैठे हैं
अड़े हुए अपनी ज़िद पर।

अब आदमी बमों के धमाके सुनने का अभ्यस्त सा हो गया है। बम फटना, मार–काट होना सामान्य सी बातें होकर रह गई है। डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल का यह तीखा व्यंग्य देखिए–

रोज सुनकर भी धमाकों का नहीं ख़ौफ़ मुझे,
क्या तमाशा है जिसे घर से निकलकर देखूँ।

अलगाववाद की ओर संकेत कर रहा डॉ. अग्रवाल का एक और व्यंग्यात्मक शेर प्रस्तुत है–

किस क़दर अलगाव का ख़ंजर कटीला हो गया,
जातियाँ बँटने लगी, घर–घर कबीला हो गया।

समाज, राष्ट्र और सम्पूर्ण विश्व के लिए गंभीर खतरा बने आतंकवाद और अलगाववाद से त्रस्त आज के आदमी की पीड़ा को कवियों ने अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से बहुत ही सरल ढंग से अभिव्यक्ति दी है।

8. नई सभ्यता और फ़ैशनः

आज हमारी नई पीढ़ी फ़ैशन के नाम पर पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण कर रही है। टी.वी. चैनलों की विष–बेल ने नवयुवकों एवं नवयुवतियों को पथ–भ्रष्ट कर दिया है। अपने पारंपरिक संस्कार, रीति–रिवाज, खान–पान और पहनावा को छोड़कर यह युवा वर्ग तेजी से पतन की ओर अग्रसर है।

सभ्यता के इस बदलाव को हास्य कविता के माध्यम से काका हाथरसी कितने सुन्दर ढंग से समझा रहे हैं–

शिष्या को समझा रहे, त्रिगुणाचार्य त्रिशूल
डैडी कहने की प्रथा, संस्कृति के प्रतिकूल
संस्कृति के प्रतिकूल, लाड़ली लड़की भोली
करके नीची नज़र, मंद सप्तक में बोली
कहूँ पिताजी तो यह कठिनाई आती है
टकराते हैं होठ, लिपस्टिक हट जाती है।

पाश्चात्य संस्कृति के मोह–जाल में फँसी नई सभ्यता किस प्रकार हमारी सामाजिक परंपराओं एवं मर्यादाओं पर तुषारापात कर रही है, डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल के एक बहुत ही सुन्दर शेर में देखिए–

बेटा सरहद पार से लाया, जीवन–संगिनी सुंदर–सी,
किसने सोचा पहन रही है, बहू की उतरन माता क्यों।

व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से कवियों ने आधुनिकता से प्रभावित नई सभ्यता और फ़ैशन को लेकर जिन परिस्थितियों की ओर संकेत किया है, उनका साक्षी पूरा समाज है।

9. नारी : शोषण एवं अत्याचार

नारी ईश्वर की श्रेष्ठतम रचना है। संसार में जो कुछ सत्य है, सुंदर है, नारी उसका प्रतीक है। सावित्री, सीता, उर्मिला, अपाला, गार्गी आदि अनेक ऐसी नारियाँ हैं, जिन्होंने अपने तप, विद्वता, त्याग और प्रेम से समाज में अत्यन्त ऊँचा स्थान ग्रहण किया। धीरे–धीरे नारी की दशा गिरने लगी। पर्दा–प्रथा, अनमेल विवाह, दहेज–प्रथा तथा उत्तराधिकार से वंचित रखने के कारण नारी–जीवन को नरक बना दिया गया।

पारिवारिक शोषण की चक्की में पिसती एवं समाज से खिन्न नारी का दर्द डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल की ग़ज़ल के निम्न दो व्यंग्यात्मक शेरों में देखिए–

कौन मुझको मेरा पता देगा,
कौन अब मुझको रास्ता देगा।

दर्द, बेचैनियाँ, घुटन, आँसू
ये जहाँ मुझको और क्या देगा।

जीवन में शोषण एवं अत्याचार के कड़वे अनुभवों ने सीधी–सादी और भोली–भाली नारी को ज्वालामुखी में परिवर्तित कर दिया है। डॉ. गिरिराज जी के शब्दों में–

मेरे अन्दर खौलता लावा पिघलती आग है,
फूल खिलते थे मेरे मन में, कभी ऐसा भी था।

अन्य व्यंग्य–रचनाकारों ने भी नारी–शोषण एवं अत्याचार को अपनी कविताओं में पर्याप्त स्थान देकर पाठक वर्ग को सोचने पर विवश किया है तथा नारी के साथ भेदभाव की मानसिकता बदलने के लिए प्रेरित किया है।

उक्त प्रसंगों के अतिरिक्त व्यंग्य–रचनाकारों ने राष्ट्रीय एकता, व्यवस्था विरोध, न्याय व्यवस्था, अंधविश्वास, रूढि विरोध, जल संकट आदि विभिन्न विषयों पर भी अपनी कलम चलाई है।

जल संकट पर डॉ. नरेन्द्रनाथ लाहा की व्यंग्य–क्षणिकायें जल संरक्षण के लिए प्रेरित करती हैं–

आने वाला समय
शायद यही बतलाएगा
पेट्रोल पम्प पर
पानी भी बिक पाएगा।

पहले बूँद–बूँद से
घड़ा भर जाता
अब बूँद–बूँद से
गिलास नहीं भर पाता।

निष्कर्षतः, हास्य–व्यंग्य रचनाओं में सामाजिक सरोकार बहुआयामी रूप में प्रकट हुए हैं। व्यंग्यकारों ने वर्तमान से जुड़े प्रत्येक विषय को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति दी है और सामाजिकता का चित्रण व्यापकता और गहनता के साथ किया है। जीवन और समाज की प्रत्येक विसंगति को रचनाओं में उकेरा गया है। इन व्यंग्यपूर्ण रचनाओं में एक ओर जहाँ आम आदमी की वेदना को मार्मिक अभिव्यक्ति मिली है तो दूसरी ओर जीवन की त्रासद स्थितियों पर व्यंग्यबाणों से तीखे प्रहार भी किये गए हैं। वास्तव में हास्य–व्यंग्य कवियों ने संकेतों के माध्यम से ही बहुत बड़ी–बड़ी बात कहने में सफलता प्राप्त की है। हास्य कवितायें गुदगुदाती हैं लेकिन हमारे हृदय पर कोई न कोई संदेश अवश्य छोड़कर जाती है। व्यंग्य रचना तो सीधे–सीधे विसंगतियों पर चोट करते हुए पाठक को उद्वेलित करती हैं।

हिंदी द्वारा सारे भारत को एकसूत्र में पिरोया जा सकता है।

(महर्षि दयानन्द सरस्वती)